Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 8, Issue - 4, April - 2025

DOIs:10.2018/SS/202504019 --:-- Research Paper / Article / Review

भारतीय ज्ञान परंपरा के विचार और आधुनिक उच्च शिक्षा में उनकी प्रासंगिकता

(भूगोल विषय के विशेष संदर्भ में)

डॉ. विनय कुमार वर्मा
सहायक प्राध्यापक भूगोल, शास. महाविद्यालय पथरिया
Email - vinayvkv1978@gmail.com

शोध सारांश : भारत एक अत्यंत प्राचीन सभ्यता और संस्कृति वाला देश है। सिंधु घाटी सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। प्राचीनकाल से ही भारत में ज्ञान व विज्ञान अत्यंत उन्नत रहा है। यहाँ तक कि जब विश्व के अन्य देश बर्बर व आदिम अवस्था में थे तब भी भारत ने विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति कर ली थी। भारत में ज्ञान की परंपरा सदियों तक मौखिक व श्रुति के रूप में विद्यमान रही। भारतीय धर्मग्रन्थो एवं प्राचीन साहित्य में उपलब्ध ज्ञान वर्तमान समय में पूर्णयता प्रासंगिक है क्योंकि यह ज्ञान आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान के समतुल्य है।ऋग्वेद को संसार की प्राचीनतम पुस्तक कहा जाता है जो अपने आप में वैज्ञानिक ज्ञान का आधार है। ऋग्वेद की रचना सर्वाधिक प्राचीन यूनानी ग्रन्थ इलीयट व ओडेशी से भी पूर्व की गई थी। इसकी रचना किसी एक ऋषी ने अपने जीवनकाल में नहीं की बल्कि अनेक ऋषियों एवं कालों के उद्गार अनुभव एवं चिंतन का दर्शन है।अधिकांश प्राचीन ग्रन्थों में धर्म दर्शन व प्रकृति का भाव पक्ष इतना अधिक समाया है कि अन्य सभी वर्णन उसी पृष्ठ भूमि में दृष्टिगत होते हैं। भूगोल एक ऐसा विषय है जो मूलतः पृथ्वी तल पर पायी जाने वाले तत्वों व मानवीय क्रियाकलापों का अध्ययन करता है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों वेद, पुराण, अरण्यक, ब्राम्हण ग्रंथ, महाकाव्यों तथा विभिन्न संहिताओं में भौगोलिक ज्ञान भरा पड़ा है जो आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान के समान ही है। भारतीय ग्रंथों में पृथ्वी और ब्रम्हाण्ड की उत्पत्ति, पर्वतों, नदियों, प्रदेश, कृषि, खनिज व धातु, वनस्पतियॉ, उद्योग व तत्कालीन नगरों और अधिवासों का विस्तार से वर्णन मिलता है, जो आधुनिक भूगोल की मुख्य विषय वस्तु है।

कुंजी शब्द: ज्ञान , परंपरा , संस्कृति, भौगोलिक, वेद ,प्राचीन साहित्य ।

1. प्रस्तावना :

ज्ञान परंपरा से आशय विद्यमान ज्ञान एवं विज्ञान का अगली पीढ़ी में हस्तान्तरण से होता है। इस अर्थ में भारतीय ज्ञान परंपरा सदियों से विद्यमान है। भारतीय ज्ञान परंपरा में सिद्धान्तों, चिन्तन, मनन, श्रवण को प्रमुखता दी गई है जो हजारों वर्षो के तप व साधना से निर्मित किये गये हैं तथा प्रत्येक समय व परिस्थिति में प्रासांगिक हैं। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर केन्द्रित थी । वह ऐसी व्यवहारिक शिक्षा पर आधारित थी जो व्यक्ति के चारित्रिक निर्माण तथा आजीविका प्राप्ति के लिए सक्षम थी। सदियों तक गुरूकुल एवं आश्रम ज्ञान व साधना

के केन्द्र बने रहे । भारत में ज्ञान हमेशा से ही मानवता व विश्व कल्याण पर आधारित था। भारतीय ज्ञान परंपरा अद्‌वितीय ज्ञान का भण्डार है। जिसमें व्यवहारिक ज्ञान एवं विज्ञान, लौकिक एवं परलौकिक, कर्म, धर्म तथा भोग एवं त्याग का अद्‌भुत समन्वय है । वैदिक काल से ही शिक्षा प्रणाली जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्‌धिक मूल्यों पर केन्द्रित होकर आत्मनिर्भरता एवं समानता पर जोर देती थी। (परिहार एवं चौहान-2024)

भारतीय ज्ञान परंपरा सदियों तक मौखिक एवं श्रृति के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होती आयी है। भारत में सिन्धु घाटी की सभ्यता का विकास 4000 ईसा पूर्व हुआ था परंतु इस काल का कोई प्रमाणित ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। भारत में आर्यो के प्रवेश से पूर्व द्रविण संस्कृति विकसित थी जिसका विकास सिन्धु, सरस्वती, सतलज एवं पश्चिमी गंगा घाटी क्षेत्र में था परंतु इस काल में लिपी का विकास न होने से ज्ञान उपलब्ध नहीं है। सिन्धु घाटी सभ्यता के समय कृषि एवं हस्तशिल्प विकसित अवस्था में थी। इन्होंने नगरीय सभ्यता का विकास उत्तरी पश्चिमी भारत में गुजरात से हिमाचल प्रदेश एवं सिन्धु गंगा घाटी के मध्यवर्ती भागों में किया। इस सभ्यता के अवशेष पंजाब, हरियाणा, राजस्थान एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भी प्राप्त हुए हैं। यहॉ के निवासियों ने आर्थिक दृष्टि से कृषि, उद्‌योग ,व्यापार ,विकसित भवन निर्माण ,बंदरगाह, नौका परिवहन, रसायन विद्‌या, धातु शिल्प आदि का पर्याप्त विकास किया । इस काल में धातु से मूर्तियां बनाने का काम भी विकसित अवस्था में था। सड़के, नालियां, स्नानागार आदि पक्की ईटों से निर्मित तथा व्यवस्थित थे।

ईसा पूर्व 3500 से 1500 ईसा पूर्व वैदिक काल माना जाता है जिसमें चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वेद के साथ ब्राम्हण ग्रन्थ एवं उपनिषदों की रचना की गई। वेद प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा के आधार स्तंभ हैं जिनका एक एक मंत्र और शब्द शाश्वत माना गया है। वेदों में श्रृष्टि रचयिता परमेश्वर ब्रम्हा, सूर्य ,त्रिदेव, शक्तियां एवं गणेश के अतिरिक्त आर्यावर्त एवं जम्बूद्‌वीप के पर्वत ,नदियां ,सागर, जलवायु, ज्योतिष विद्‌या, आर्यावर्त के जनपद राजवंश प्रमुख धार्मिक स्थल, नगर, वनस्पतियों के प्रकार, प्रमुख जन जातियां, पशु, आर्थिक क्रियायें, सिंचाई के साधन, कृषि एवं शिल्प, यातायात ,व्यापार से संबंधित भौगोलिक तथ्य विद्‌यमान हैं। वेदों में जितना विस्तार से खगोल विज्ञान, नक्षत्र विद्‌या, सूर्य और अन्य आकाशीय पिण्डों का वर्णन किया गया है, उतना अन्य ग्रन्थों में नहीं मिलता। वेदों के पश्चात् लिखे गये ब्राम्हण, अरण्यिक, कल्प, सूत्र आदि ग्रन्थों में ऋग्वेद के कई मंत्रों को उसी स्वरूप में लिखा गया है। अन्य वेदों में श्रृष्टि रचना, आकाशीय पिण्ड, पृथ्वी की आकृति, सूर्य की गतियां, चन्द्रमा की कलायें, दिन रात की अवधि, राज्यों और युद्‌धों का वर्णन किया गया है।

ऋग्वेद की रचना ईसा पूर्व 6000 माना जाता है जिसमें 1028 सूक्त हैं जो प्राचीनतम ज्ञान का भण्डार हैं। वैदिक काल में नगरीय बस्तियॉ योजनाबद्‌ध तथा भू-आकृतिक विन्यास के आधार पर बसी होती थी। इस काल की रचनाओं से भौतिक भूगोल, आर्थिक भूगोल, समाजिक भूगोल, कृषि भूगोल, परिवहन भूगोल, खगोलीय भूगोल आदि का विकास चरम सीमा पर था। अलग-अलग समय में लिखे गये पुराण, रामायण और महाभारत, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, जैन एवं बौद्‌ध धर्म ग्रन्थ, गुप्तकालीन शिलालेख व साहित्य प्राचीन ज्ञान परंपरा के प्रमुख स्रोत है जिनमें भौगोलिक ज्ञान का विषद वर्णन उपलब्ध है।

एक विषय के रूप में भूगोल पृथ्वी तल पर पाये जाने वाले तत्वों का वितरण का अध्ययन करता है। आधुनिक भूगोल का जन्म एवं विकास यूनान में माना जाता है। भौगोलिक ज्ञान का उद्‌भव प्राचीन भारत में सदियों पूर्व ही हो चुका था। यद्‌यपि भूगोल शब्द प्रचलन में नहीं था परंतु भौगोलिक अध्ययन की प्रमुख विषय वस्तु पृथ्वी एवं उसकी संरचना, ब्रम्हाण्ड, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, कृषि, वन, पर्वत, प्राकृतिक वनस्पतियॉ, नगर, उद्‌योग, परिवहन के साधन आदि का विषद वर्णन प्राचीन भारतीय ग्रन्थों से प्राप्त होता है।

भारतीय ज्ञान परम्परा के स्रोत

वेद	वेदांग	उपांग	उपवेद
ऋग्वेद	शिक्षा	पुराण	आयुर्वेद
यजुर्वेद	व्याकरण	मीमांसा	अथर्ववेद
सामवेद	कल्प	धर्मशास्त्र	गंधर्ववेद
अथर्ववेद	निरुक्त	न्याय	धनुर्वेद
	छन्द		
महाकाव्य(रामायण, महाभारत,) कौटिल्य का अर्थशास्त्र, जैन एवं बोध साहित्य, प्राचीन भारतीय साहित्य			

2. परिणाम एवं विश्लेष्ण :

भारतीय ज्ञान परंपरा में भौगोलिक चिन्तन व ज्ञान के निम्नानुसार आयामों का प्रमुखता से उल्लेख मिलता है:-

ब्रम्हाण्ड व पृथ्वी की उत्पत्ति संबंधी विचार -

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में ब्रम्हाण्ड व पृथ्वी की उत्पत्ति संबंधी विचारों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसके साथ ही पृथ्वी संबंधी विभिन्न गणनायें, ग्रह, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रमा, ग्रहण आदि का उल्लेख मिलता है जो आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान से अत्यंत निकट है। वेदों के अनुसार श्री हरि विष्णु की नाभि से एक कमल पुष्प निकला जिससे ब्रम्हा की उत्पत्ति हुई, ब्रम्हा ही ब्रम्हाण्ड है, ब्रम्हा का जीवन 100 वर्ष काल का है। ब्रम्हा के हर दिन को एक कल्प कहा जाता है। प्रत्येक कल्प में 14 मनु अवतार होते हैं। प्रत्येक मनु अवतार में 71 महायुग होते हैं तथा एक महायुग में 4 युग होते हैं। इस प्रकार ब्रम्हाण्ड की आयु 4.32 बिलियन वर्ष ठहरती है। ऋग्वेद में सूक्त 121.1 के अनुसार संसार के इस रूप मं आने से पहले हिरण्यगर्भ की स्थिति थी । यह स्वर्णमय पंच भूत समूह का भूलोक को धारण किया है। हिरण्यगर्भ एक स्वर्णिम आत्मा वाला आद्य पदार्थ से निर्मिक एक ऐसा स्थिर पदार्थ समूह था जिसमें स्वयं की हुई हलचलों से स्वर्णमय उपादान , पंचभूत समूह सहित गतिशील बना। इससे ही पृथ्वी व अन्य ग्रह ,सूर्य एवं नक्षत्र मण्डल की उत्पत्ति हुई। वेदों में ब्रम्हाण्ड की आकृति एवं विस्तार का भी वर्णन किया गया है। ब्रम्ह पुराण के अनुसार ब्रम्हाण्ड की आकृति दीर्घवृतीय है। नक्षत्रों एवं नक्षत्र पुन्जों के मध्य रिक्त स्थान में आकाश है जिसे पांच पंचतत्वों में से एक माना गया है। जैन दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण लोकाकोक की आकृति एक ऐसे बेलन जैसी है जिसके मध्य का भाग मोटा है। सभी प्राचीन भारतीय ग्रन्थों के अनुसार ब्रम्हाण्ड में स्थित प्रत्येक पिण्ड गतिशील है। उपनिषदों में उल्लेख मिलता है कि सभी आकाशीय पिण्ड एक ही आद्य पदार्थ से निर्मित हैं परंतु इनकी रचना का कार्य पृथक-पृथक है। प्रारंभिक आद्य पदार्थ से अनेक वायव्य पिण्डों की उत्पत्ति हुई । यह पिण्ड स्वभाव से ठण्डा, गैसीय एवं धूलीय मेघ युक्त था । धूलीय मेघ के परमाणु पारस्परिक गुरूत्वाकर्षण के कारण गतिशील हो उठते हैं । इसी भ्रमणशील धूलीय मेघ से क्षुब्ध ग्रहों का निर्माण हुआ है। इन्हीं क्षुब्ध ग्रहों में से कुछ क्षुब्ध ग्रहों ने मिलकर अपने आकार में वृद्धि कर ली तथा ग्रहों के रूप में परिवर्तित हो गये। भारतीय ग्रन्थों में वर्णित यह विचार आधुनिक परिकल्पनाओं के समान ही है।

पर्यावरण विज्ञानः-

पर्यावरण को परिधि शब्द से परिभाषित करते हुए अथर्वेद में कहा गया है -

सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरूषः पशुः ।

यतेन्द्र ब्रम्हा क्रियते परिधिजीवनायकम् ।। (अथर्वेद)

वेदों में पयार्वरण के तीन संघटकों की चर्चा की गई है जलवायु एवं औषधि (वनस्पतियॉ) । ये तीनों तत्व पृथ्वी पर मानव व जीवधारियों के जीवन का आधार है। पर्यावरण संरक्षण का भाव सदियों पूर्व ही प्रस्तुत किये गये थे। अथर्वेद के सूत्र में लिखा गया है कि -

यन्ते भूमि विखनामि, शिप्रं तदपि रोहतु ।

मा ते मर्म विमृग्वारी मा ते हिरदयमपिरपम् ।।

हम पृथ्वी के जिस भाग को खोदते हैं उसे शीघ्र ही भर देना चाहिए । किसी भी अवस्था में पृथ्वी के हृदय व मर्म स्थानों को क्षति न पहुंचायें क्योंकि पृथ्वी हमारी माता है। हमारे अपराधों के कारण ही प्रकृति विकृत होती जा रही है। इसका रौद्र रूप अकाल, बाढ़, सूखा, महामारी, सुनामी एवं भकंप जैसी आपदाओं में हमें देखने को मिलता है।

खगोल विज्ञानः-

भारतीय ज्ञान परंपरा व प्राचीन साहित्य में खगोलकीय भूगोल अत्याधिक विकसित अवस्था में था। विभिन्न आकाशीय पिण्डों सूर्य एवं चन्द्रग्रहण दिन रात की अवधि, ऋतु परिवर्तन, सौर एवं चन्द्र मास आदि की शुद्ध गणनायें की गई थी। वेदों में उल्लेख मिलता है कि पृथ्वी का आकार गोलाकार है तथा व आकाश में निराधार हैं। वैदिक ग्रन्थों में राशियों व नक्षत्रों का विषद वर्णन है। ध्रुव तारे को स्थिर बताया गया है। वेदों के अनुसार पृथ्वी की आयु 2.50 अरब वर्ष है जो आधुनिक वैज्ञानिक गणनाओं के अत्यंत निकट है। प्राचीनकाल में आर्यभट्ट, वराहमिरि, भास्कराचार्य, ब्रम्हगुप्त एवं श्रीपति जैसे विद्वानों ने खगोल विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया । आर्यभट्ट द्वारा न केवल यह विचार प्रस्तुत किया गया कि पृथ्वी गोलाकार है बल्कि उसकी परिधि की भी शुद्ध गणना की । भास्कराचार्य द्वारा भी पृथ्वी के आकार व भ्रमण के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत किये। ब्रम्हगुप्त द्वारा पृथ्वी की परिधि की गणना की गई। ईसा पूर्व पांचवी शताब्दी में आर्यभट्ट के अनुसार पृथ्वी का व्यास 1050 योजन अथवा 8400 मील है। जबकि बराह मिरि के नुसार इसका व्यास 1018 योजन (8144 मील) है। उपर्युक्त गणनायें वर्तमान गणना से मेल खाती हैं। पृथ्वी को महाद्वीपों एवं महासागरों में विभाजित कर आज से हजारों वर्ष पूर्व ही भौगोलिक वर्णन की वर्तमान की आधारभूत एवं भौतिक भूगोल की व्यवस्था को स्पष्ट किया गया था। भास्कराचार्य ने 1150 ईसवी में सिद्धान्त शिरोमणी ग्रंथ की रचना की थी इसमें शून्य से भाग देने पर किस अंक का परिणाम अनन्त आता है संबंधी तथ्य दिये गये हैं। इसमें प्रस्तुत बीज गणित, वर्तमान समय में स्नातकोत्तर स्तर पर संचालित हैं। शून्य का प्रयोग सर्वप्रथम भारत में ही प्रारंभ हुआ। प्राचीन यूनानी विद्वानों को भी शून्य का ज्ञान नहीं था । ईसा पूर्व 200 में पिंगल ने अपने ग्रन्थ छंद्र सूत्र में शून्य उसकी महत्ता और उसके प्रयोग की विस्तृत व्याख्या की है। इसी काल में लिखा गया जैन ग्रन्थ अनुयोगद्वार में किसी संख्या के आगे बार बार बिन्दु लगाकर उसकी मान को दस, शत, सहस्त्र आदि में बहुगुणित करने की पद्धति को समझाया गया है। छठी शताब्दी में जैन ग्रन्थ पंच सिद्धान्त में आचार्य भ्रद सूर्य ने एक से नौ तक की संख्या के आगे या संख्याओं के मध्य में शून्य के प्रयोग के व्यवहारिक पक्ष को विस्तार से समझाया है।

भौतिक भूगोलः-

भौतिक भूगोल, भूगोल की प्रारंभिक शाखा है जो पृथ्वी पर विद्यमान भौतिक तत्वों का अध्ययन करती है। प्राचीन भारतीय धर्मग्रन्थों एवं साहित्य में तत्कालीन पर्वतीय क्षेत्रों, झीलों, नदियों, प्राकृतिक वनस्पतियों, मरूस्थल एवं विभिन्न ऋतुओं का वर्णन मिलता है। पुराणों में विश्व को 7 भूखण्डों में विभाजित बताया गया है जो 7 महाद्वीपों का द्योतक है। ये भूभाग हैं, जम्बू, प्लाक्ष, शाल्मली, क्रोन्च, कुश्य, शब्य एवं पुस्कर ।प्रमुख भारतीय भुगोलवेत अय्यर के अनुसर जम्बू दीप ही वर्तमान भारत है इसी प्रकार अन्य द्वीपो के संभवित वर्तमान स्थान है-कुश (इराक, ईरान, अरबिया) प्लक्ष (युनान) क्रोंच, (एशिया माइनर) शाल्मली (सरमतिया,) शाक, (दक्षिणी तुर्किस्तान,) पुष्कर (स्केथिया). पुराणों में अपवाह तन्त्र का वर्णन मिलता है। मेरू पर्वत से चारों ओर नदियां प्रवाहित होती हैं । ये नदियां हैं चाक्षु (पश्चिम दिशा) सीता (पूर्व दिशा) , भद्र सौम (उत्तर दिशा) तथा भागीरथी (दक्षिण दिशा) । विष्णु पुराण में जम्ब द्वीप की 92 नदियों का उल्लेख मिलता है जबकि मत्स्य पुराण में हेमकूट व कैलाश पर्वत की नदियों का उल्लेख है।उत्तर वैदिक काल में आर्यावर्त के विस्तार के साथ-साथ मध्य भारत तथा दक्षिण भारत की नदियाँ की भी जानकारी प्राप्त हुई जिसमें चंबल, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी प्रमुख हैं। ऋग्वेद में भारत की प्रमुख नदियों का उल्लेख निम्नानुसार किया गया है-

इमं मे गंगे, यमुने सरस्वती, शतदी स्तोमे सयता पुरूश्ण्या ।

असि कन्या मरूद्रधे वितस्ता र्जीकीये शृणुहाया सुषेभया ।।

प्राचीन भारतीय साहित्य तथा जैन एवं बौद्ध धर्म ग्रन्थों में विभिन्न पर्वतों यथा हिमवत, कुरू, हिन्दुकुश, विन्ध्यांचल, सहयाद्री, माद्र एवं महेन्द्र पर्वत का उल्लेख मिलता है। उत्तर वैदिक साहित्य पुराण महाकाव्य आदि में मेरू पर्वत को सबसे ऊंचा, उत्तम, पवित्र एवं सर्वाधिक महत्व वाला पर्वत बताया गया है, सुमेरू पर्वत को जम्बू द्वीप के मध्य में स्थित माना गया है। अथर्वेद में इसे इस द्वीप का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पर्वत बताया गया है। विष्णु पुराण के अनुसार जम्बूद्वीप सभी द्वीपों के मध्य में एवं इसी मध्य में स्वर्णिम आभा वाला यह महान पर्वत स्थित था जिसकी ऊंचाई 84 हजार योजन भूतल से गहराई 16 हजार योजन एवं इसके शीर्ष की परिक्रमा 32000 योजन एवं आधार का व्यास 16000 योजन है। जम्बू द्वीप की अन्य पर्वतमालाओं में हिमवान अथवा हेमवंत का भी उल्लेख मिलता है जो भारत वर्ष के उत्तर में स्थित था। वर्तमान हिमालय ही हेमवंत पर्वत माना जाता है जिसका वर्णन ऋग्वेद सहित सभी प्राचीन ग्रन्थो में मिलता है। मत्स्य पुराण के अनुसार यह पर्वत जम्बूद्वीप का सबसे दक्षिण का पर्वत है। जिसका विस्तार सागर से, सागर तक है, अर्थात् इसके दोनों छोर पर विशाल जलाशय या सिन्धु है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में हेमकूट की स्थिति उत्तर में बताई गई है । कैलाश पर्वत को किम् पुरूष अथवा हेमकूट माना गया है। हेमकूट पर्वत एक जटिल पर्वत माना गया है। हेम का अर्थ वर्फ होता है एवं कूट का तात्पर्य पर्वत श्रेणी है अर्थात् यह एक ऐसी पर्वत श्रेणी है जहॉ सदैव बर्फ विद्यमान होती है। निषाद, गंधमाधन, माल्यवंत, नील पर्वत, कृष्ण गिरी, अंजना पर्वत, मैनका गिरि, गोर्वधन, पार्श्वनाथ सहयाद्री, महेन्द्र गिरि आदि ऐसे अन्य पर्वत हैं जिनका विस्तार से प्राचीन भारतीय धर्म ग्रन्थों एवं साहित्य में विस्तर से वर्णन मिलता है।

ऋग्वेद में पांच ऋतुओं जबकि बाल्मीकि रामायण में छह ऋतुओं का उल्लेख किया गया है। ये ऋतु है बसंत, वर्षा, शरद, हेमन्त तथा शिशिर। इसके अतिरंजित मेघ बिजली, मेघों का गर्जन, हिमपत, तुषारापात आदि का भी विषाद वर्णन मिलता है।

कृषि भूगोलः

प्राचीन संस्कृत साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उस समय ग्राम्य जीवन का आधार कृषि तथा पशुपालन ही थे। विश्व-इतिहास में कृषि का ज्ञान सर्वप्रथम भारतीयों को ही हुआ। हम पाते हैं कि ऋग्वेद के समय कृषि कर्म के लिए जिन उपकरणों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ, उनका आज भी प्रयोग होता आ रहा है। पाश्चात्य विद्वान् भी यह स्वीकार करते हैं कि कृषि के प्रारम्भ होने का प्रथम संकेत ऋग्वेद में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में किसान के लिए क्षेत्रपति शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है। कृषि के प्रसंगों में प्रारम्भ वहाँ बैल, क्यारी, हल, वरत्रा (चमड़े या अन्य साधन से बनी रस्सी) अष्ट्रा (चाबुक), कीनाश (हलवाहा) आदि का उल्लेख स्पष्ट रूप से मिलता है। इनसे यह स्पष्ट है कि हल का आविष्कार भारत में हुआ। हल खींचने के लिए बैलों का प्रयोग भी भारत में ही हुआ। उसमें लोहे के फाल लगाना, क्यारियों का निर्माण करना आदि भी विश्वमानवता को हमारे देश की देन है। पशुओं को पानी पिलाने के लिए प्रयुक्त होने वाले पात्र को आहाव कहा जाता था। इस आहाव को रस्सी से बाँधकर कुएँ से पानी खींचा जाता था। बैलों के कंधे में रखे जाने वाले जुएँ का उल्लेख भी ऋग्वेद में मिलता है।

क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान् नो अस्तु। (ऋ. ४/५७/३)
शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्।
शुनं वरत्रा वध्यन्तां शुनमष्ट्रादिङ्गय।।
शुनं नः फाला विकृषन्तु भूमि शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः।।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोगि शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम्।।

(ऋ.४)

आज हम जिस अन्न का उपयोग करते हैं, वह हमें कब और कहाँ से प्राप्त हुआ ? इस प्रश्न का उत्तर वैदिक साहित्य में अनेकत्र निहित है। वैदिक काल में हमें धान, यव (जव), उड़द, तिल, मूँग, खल्व, प्रियंगु, अणु, श्यामाक (सवा, भगर), नीवार (जंगल में उत्पन्न होने वाल धान), गेहूँ, मसूर आदि अन्नों का पूर्णतः परिज्ञान था। समाज में इनसे बने विभिन्न व्यंजनों का प्रयोग होता था। अब तक हमें यह बताया जाता रहा है कि गेहूँ हमारे देश में बाहर से आया, किन्तु यह कथन पूर्णतः असत्य और अप्रमाणिक है। वेदों में गेहूँ का उल्लेख अनेकत्र प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त हमारे देश में मधु, दूध, दही, घृत इत्यादि का भी प्रयोग वैदिक काल से होता आ रहा है। जिनका उल्लेख अनेकत्र प्राचीन साहित्य में प्राप्त होता रामायण तथा महाभारत में सिंचाई हेतु जलशयो का वर्णन मिलता है इसके पूर्व नदियों तथा नहरों के प्रयोग का भी उल्लेख प्राप्त होता है जलशयो का निर्माण प्राकृतिक नालो को बंधकर अथवा भूमि को खोदकर किया जाता था जलशयो के चारो या पेड़ लगाये जाते थे।

राजनैतिक भूगोल तथा आर्थिक भुगोलः-

प्राचीन भारतीय धर्म ग्रन्थों तथा साहित्य में तत्कालीन देशों, राज्यों, कृषि, व्यापार, उद्योग, पशुपालन बस्तियों व नगरों का विस्तृत वर्णन मिलता है। उपनिषदों और महाभारत में कैकय, मद्र, गांधार, कुरू, मत्स्य, पांचाल, कौशल, मिथला एवं विदेह जैसे राज्यों का उल्लेख है। जैन एवं बौद्ध धर्म गन्थों में मगध, काशी, चैदि, कुरू, कम्बोच आदि राज्यों का वर्णन मिलता है। वाल्मिकी रामायण में मध्य एशिया, दक्षिण एशिया तथा सुदूर पूर्व का वर्णन मिलता है। बौद्ध ग्रंथो में सोलह महाजनपदों का उल्लेख किया गया है ये जनपद है-काशी, कोशल, अंग, मगध, वज्जि, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पांचाल.मत्स्य, शूरसेन, अवंती, गंधार तथा कम्बोजवेदों एवं पुराणों में कृषि फसलों, पशु पालन व विभन्न प्रकार

के उद्योगो का उल्लेख किया गया है। प्राचीन काल में रेशम व कपास से वस्त्र बनाने, धातु से वर्तन, सिक्के व औजार बनाने के उद्योग विकसित थे। वैदिक काल में मनुष्य को ऊन का ज्ञान हो चुका था तथा उससे तन्तु (सूत) बनाने की कला में भी वह प्रवीण था। कताई किस यन्त्र से की जाती थी, इस विषय में यद्यपि वहाँ कोई उल्लेख नहीं है तथापि कताई किये जाने का उल्लेख सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्राप्त होता है। उस समय कताई करके सूत बनाया जाता था तथा उन सूतों से वस्त्र का निर्माण किया जाता था। बीच से धागे को टूट जाने पर उसके जोड़ने का भी उल्लेख वैदिक साहित्य में मिलता है। जो सूत्र टूट जाता था उसे 'छिन्न' तथा बिना टूटे हुए सूत्र को 'अच्छिन्न कहते थे। अथर्ववेद काल में करघे का नाम 'तन्त्र' प्राप्त होता है, जिसमें ताना-बाना तानकर युवतियों द्वारा वस्त्र निर्माण किया जाता था। ऋग्वेद अनेक धातुओं का उल्लेख किया गया है जिनमे हिरण्य, अयास, रजत तथा स्वर्ण प्रमुख है यजुर्वेद में पत्थर, मिट्टी, बालू के अतिरिक्त सोना, लोहा, ताँबा, काँसा, सीसा तथा राँगा का उल्लेख प्राप्त होता है।

अयस् शब्द से यहाँ पर सीस, त्रपु शब्द से राँगा, श्याम शब्द से ताँबा तथा लोह शब्द से लोहा विवक्षित है । यजुर्वेद में लोहे को तपाने का उल्लेख प्राप्त होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय लोहे के खनिज को आग में तपाकर धातु तैयार करने की निपुणता प्राप्त थी । अथर्ववेद में भी तपाकर धातु तैयार करने का संकेत प्राप्त होता है। अथर्ववेद में श्याम (ताँबा) लोहित (लोहा) हरित (सोना) तथा त्रपु (राँगा) का उल्लेख हुआ है । ऋग्वैदिक ऋषि अपने वर्णन में उपमा का प्रयोग करता हुआ माँस की उपमा ताँबे, से रक्त की उपमा लोहे से तथा भस्म की उपमा त्रपु (राँगा) से देता है तथा वर्ण की उपमा हरित या स्वर्ण से देता है। भारतीय परम्परा में हिरण्य का परिज्ञान ऋग्वैदिक काल से ही प्राप्त होता है । ऋग्वेद में दसवें मण्डल के 121वें सूक्त को हिरण्यगर्भ सूक्त कहा गया है । इससे यह कहा जा सकता है कि ऋग्वेद में हिरण्यगर्भ को अत्यधिक महत्त्व प्राप्त है । हिरण्य शब्द का अर्थ प्रकाशमान या तेजोमय है । वेदों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस समय व्यवसाय पूर्णतः वर्णव्यवस्था पर आश्रित था। यजुर्वेद में अनेक ऐसे व्यवसायों का उल्लेख आया है, जो समाज में पूर्णतः व्यवस्थित थे। अनेक उद्योग धन्धों या व्यवसायों का उल्लेख वहाँ जिन शब्दों के द्वारा किया गया है, उनमें कतिपय निम्नलिखित हैं- कारि (शिल्पकार), रथकार (रथ बनाने वाला), तक्षाण (बढ़ई), कौलाल (कुम्हार), कर्मार (शिल्पकार), मणिकार (जौहरी), वप (बीज बोने वाला), इषुकार (बाण बनाने वाला), धनुष्कार (धनुष बनाने वाला), ज्याकार (धनुष प्रत्यंचा बनाने वाला), रज्जुसर्ज (रस्सी बनाने वाला), मृगयु (शिकारी), श्वनिन (कुत्तो का जानने वाला), पौञ्जिष्ठ (मछुआरा), विदलकारी (बांस चीरने वाली), कण्टकीकारी (काँटों का काम करने वाली), पेशस्कारी (कढ़ाई का काम करने वाली), भिषक् (वैद्य), नक्षत्रदर्श (ज्योतिषी), हस्तिप (महावत), अश्वप (घोड़ा पालने वाला), गोपाल (गाय पालने वाला), अविपाल (भेड़ पालक), अजपाल (बकरी पालक), कीनाश (किसान), सुराकार (मद्य बनाने वाला), गृहप (द्वारपाल), अनुक्षतृ (द्वारपाल का अनुचर), दार्वाहार (लकड़हारा), अग्न्येध (आग जलाने वाला), प्रच्छिद (टुकड़े करने वाला), वणिक् (व्यापारी), हिरण्यकार (सुनार), कैवर्त (मछुआरा), अयस्ताप (लुहार), रजयित्री (रंगरेजिन), वासःपल्पूली (कपड़े धोने वाली) इत्यादि। यजुर्वेद में प्राप्त इन संज्ञाओं से तत्कालीन उद्योग धन्धों का ज्ञान होता है। वैदिक काल में एक स्थान से दूसरे स्थान जाने के लिए रथ का प्रयोग किया जाता था। रथों में घोड़े जोते जाते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि वैदिक कालीन यही प्रथा हमारे युग में एक्का या बग्घी के रूप में आविष्कृत हुई। हमें यह स्वीकार करना होगा कि रथ के आविष्कार ने ही आज के अत्याधुनिक कार आदि वाहनों के आविष्कार में मूल है। ऋग्वेद के तृतीय मण्डल में रथ के अनेक अंगों का उल्लेख हुआ है, जिनमें रथ की धुरी, दण्ड, जुआँ, शैला तथा आर (तीलियाँ) आदि का उल्लेख किया गया है। वैदिक ऋषि यह सुझाव देता है कि गाड़ी के पहिए खदिर काष्ठ (कत्थे की लकड़ी) से बनाने चाहिए तथा उसका फर्श शिंशप (शीशम) की लकड़ी से बनाने चाहिए।

भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक उच्च शिक्षा में उनकी प्रासंगिकता

भारतीय ज्ञान परंपरा आधुनिक उच्च शिक्षा में अनेक दृष्टिकोण से प्रासंगिक है। सनातन ज्ञान के शिक्षण एवं अध्ययन से शिक्षक तथा विद्यार्थी को प्राचीन ज्ञान, दर्शन, धर्म एवं संस्कृति से गहनता से जोड़ा जा सकता है। साथ ही साथ वे प्राचीन भारत के गौरवशाली अतीत, जीवन शैली, विविध कलाये एवं जीवन मूल्यों से परिचित हो सकेंगे। प्राचीन भारतीय धर्म ग्रंथो,वेद,पुराण,ब्राह्मण,उपनिषद,रामायण,महाभारत एवं प्राचीन साहित्य .विभिन्न साहित्यो में वर्णित ज्ञान को समझने का अवसर प्राप्त होगा बाल्की शोध एवं शिक्षण के नवीन अयामो का सूत्रपात होगा जिसके कारण नवीन ज्ञान में वृद्धि हो सकेगी प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा मूल्य आधारित थी अत: छत्रो के चारित्रिक निर्माण तथा बोधिक विकास हेतु यह अत्यन्त उपयोगी है। शिक्षार्थी अपने व्यवहार एवं बौध्दिक कोशल से जिम्मेदार नागरिक बन सके, इसके लिए सनातन ज्ञान, परंपरा, प्रथा, विचारो, एवं मूल्यों को आधुनिक ज्ञान के साथ एककृत किया जाना चाहिए ताकि छात्रों का सर्वांगीण विकास हो सके।

3. निष्कर्ष :

भारतीय ज्ञान परंपरा अत्यंत समृद्धशाली है। ज्ञान की यह परंपरा भारत में मानव सभ्यता के विकास के साथ ही प्रारंभ हो जाती है। चार वेद, ब्राम्हण ग्रन्थ, उपनिषद, पुराण, रामायण व महाभारत तथा विभिन्न संहितायें जैसे ग्रन्थां के साथ साथ विभिन्न प्राचीन भारतीय साहित्य, जैन व बौद्ध धर्म ग्रन्थों तथा शिलालेख भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रमुख स्रोत हैं जिनमें आधुनिक भूगोल के प्रत्येक आयामों का विस्तार से वर्णन मिलता है। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में पृथ्वी की उत्पत्ति, उसकी आयु, पृथ्वी के विभिन्न भूभाग, पर्वतो, नदियों, सागर तथा महासागर, झीलो, कृषि फसलो, पशुपालन, धातु, उद्योग, व्यवसाय, प्रदेश, नगरो तथा परिवहन के मार्गो का विस्तार से वर्णन मिलता है है आवश्यकता इस बात की है कि यह ज्ञान न केवल भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व पटल पर पुनः स्थापित किया जाना चाहिए। क्योंकि यह ज्ञान विश्व बन्धुत्व व मानव कल्याण पर आधारित है।

संदर्भ :

1. देवी पी, (2017) ऋग्वेद कालीन भूगोल International Research Journal of Commerce, Arts and Science, Vol 8, Issue 8,pp 237-243.
2. जैन मुकेश (2022) भारतीय ज्ञान परंपरा व शोध, अनुकर्ष , वर्ष 2, अंक 03.
3. परिहार एस एवं चौहान प्रभा (2024) भारतीय ज्ञान परंपरा और इतिहास International Journal of Enhanced Research in Education Development, vol 12, issue 1,pp 123-126.
4. यादव, एस (2016), प्राचीन भारत में भौगोलिक ज्ञान का विकास एक संक्षिप्त परिचय, Indian Streams Research Journal, vol 6,issue 5,pp1-6 .
5. विष्णु पुराण
6. मत्स्य पुराण अध्याय-121
7. ऋग्वेद 12/1/12
8. बाल्मीकि रामायण